International Journal of Information Technology and Management
Vol. 17, Issue No. 1, February-2022, ISSN 2249-4510

DOI: https://doi.org/10.29070/yyp6wm19

Check for updates

भारत-पाक तनाव

Pinku Kumar [1] , Dr. Akhtar Romani [2]

1. Research Scholar, Dept. History, M.U., Bodh Gaya, Bihar, India ,
2. Associate Professor, Department of History, S.N.S College, Jehanabad, Bihar, India

Abstract: भारत व पाकिस्तान के बीच कश्मीर को लेकर बहुत लंबे समय से मतभेद चलते आ रहे हैं, जो कि समय पर इस उपमहाद्वीप की शांति के लिए खतरा बन जाता है। यह विश्लेषण इस समस्त समस्या के जड़ व समाधान की तरफ ध्यानाकर्षण हेतु लिखा गया है। इसके लिए इस लेख को विभिन्न भागों में बांटा गया है, ताकि कश्मीर के इतिहास, विभाजन की जड़ व मजबूरियाँ, पाकिस्तान का कश्मीर को लेकर उतावलपन व संयुक्त राष्ट्र संघ्रा की गलतियों को बारिकी से समझा जा सके। इस लेखक की सहायता से कश्मीर समस्या के बारे में उच्चस्तरीय अध्ययन किया गया है। इस लेख से हमें ज्ञान होता है कि यद्यपि सुरक्षा परिषद के द्वारा बीच-बचाव करते हुए कश्मीर समस्या पर प्रयास तो किए गए परन्तु उन सभी ने इसे सुलझाने की बजाए किस प्रकार दोनों देशों को एक दुसरे का दुश्मन बना दिया तथा इन दोनों देशों के परमाणु शक्ति सम्पन्न होने के कारण यह स्थिति और भी गंभीर हो जाती है। अतः इस शोध पेपर का आधार इन समस्याओं की जड़ व समाधान की तरफ अग्रसर होने में सहायक होगा।

Keywords: भारत, पाक , तनाव

---------- X ----------

प्रस्तावना

प्रसिद्ध भारतीय राजनीतिक चिन्तक एवं 'अर्थषास्त्र' के रचयिता कौटिल्य ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के सन्दर्भ में प्रस्तुत अपने मण्डल सिद्धान्त में बताया है कि किसी भी चक्रवर्ती शासक या विजिगीषु राजा के लिए पड़ौसी राज्य ही सबसे विकट समस्या उत्पन्न कर सकते हैं। आधुनिक युग में भी किसी भी देष के वैदेषिक सम्बन्धों में पड़ोसी देश का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यदि पड़ौसी देशों के साथ सम्बन्ध मधुर हो तो राष्ट्रीय हित विस्तृत क्षितिज तलाश सकते हैं। भारत और उसके पड़ौसी देशों के सम्बन्धों पर भी ये बातें अवश्य लागू होती हैं। इस बात के ब्यौरे में जाने से पहले यह स्पष्ट किया गया है कि भारत के निकटस्थ किन देशों को हम भारत के पड़ौसी देश मानते हैं। भारत देश के विभाजन से जन्मा पाकिस्तान और पाकिस्तान के विभाजन से पैदा हुआ बांग्लादेष तथा नेपाल, भूटान, श्रीलंका भारत के पडौसी देष हैं। भौगोलिक दृष्टि से चीन, अफगानिस्तान, म्यांमार, इण्डोनेशिया, मालदीव, मॉरीशस भी इसी श्रेणी में रखे जाने चाहिए। पाकिस्तान और चीन के साथ भारत के सम्बन्ध विषिष्ट और जटिल हैं।

भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ ही 15 अगस्त, 1947 को भारत के विभाजन से पाकिस्तान दुनिया के नक्षे पर आ गया तथा मोहम्मद अली जिन्ना पाकिस्तान के पृथम गवर्नर जनरल बने। इसी के साथ भारतीय उपमहाद्वीप में नये संघर्ष की शुरूआत हुई, जिसे भारत-पाक संघर्ष के रूप में अभिव्यक्ति किया जाता है। भारत और पाकिस्तान के मध्य सम्बन्ध और उनके सम्बन्धों में जटिलता का बीज तत्व पाकिस्तान के उदय के कारकों में ही निहित था और अभी तक उसमें बदलाव नहीं आया है बल्कि यह और भी ज्यादा बहुआयामी हो गया है।

दरअसल पाकिस्तान का जन्म साम्प्रदायिकता के गर्भ से हुआ था, जिसका कोई ठोस आधार न तो पाकिस्तान के निर्माता सिद्ध कर पाये और न ही ब्रिटिष शासक। चूंकि पाकिस्तान उस प्रस्ताव की उपज था जो जिन्ना की राजनैतिक पराजय के बाद नेस्तनाबूद हो जाने के भय से धार्मिक उन्माद की बुनियाद पर खडा किया गया था, इसलिए भारत के विभाजन तक यह नारा बरकरार रहा कि 'इस्लाम खतरे में' है। भारत में हिन्दु राज स्थापित हो जाने के खतरे को मुस्लिम लीगियों ने शोषित मुस्लिम जनता के हित प्रस्तुत कर पाकिस्तान नाम के कृत्रिम राष्ट्र को निर्मित करने का शडयन्तू रचा। लेकिन इसके बाद भी उस आवाम की स्थितियां नहीं बदली। पाकिस्तान बना तो, लेकिन छद्म विभाजन ने उसके समक्ष तकनीकी चुनौती प्रस्तुत कर दी थी। पष्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान के बीच न केवल भौगोलिक दूरी बल्कि भाषा और संस्कृति के मध्य व्याप्त गहरी विशमता, राष्ट्रीय एकता के प्रष्न को दुरह बना रही थी। परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी हुकुमत और जिन्ना तथा जिन्ना-वादियों के सारे तर्क बेमानी हो गये और सन् 1971 में इस कृत्रिम राष्ट्र से बंगाली संस्कृति के पोषक अपने आपको एक राष्ट्र (बांग्लादेश) के रूप में अलग करने में कामयाब हो गये। जिससे पाकिस्तान एवं भारत के सम्बन्ध और बिगड़गये। क्योंकि पाकिस्तान बांग्लादेष निर्माण का कारण भारत को मानता है।

भारत-पाक के मध्य तनाव के लिए उत्तरदायी कारकों को तीन सन्दर्भों में देखा जा सकता है अर्थात् तात्कालिक समस्याएं, धार्मिक आधार पर भारत का विरोध तथा पाकिस्तान द्वारा पश्चिमी सैन्य संगठन की सदस्यता हासिल करना। पाकिस्तान के साथ पेचिदा समस्या कश्मीर की थी और दूसरी समस्या शरणार्थियों तथा उनकी सम्पत्ति की थी। जिसका कारण भारत के विभाजन में ही निहित था। इसके साथ ही दोनों देशों के बीच नदी जल विवाद, आतंकवाद, नियंत्रण रेखा आदि विवाद आज भी कायम हैं।

प्रस्तुत शोध कार्य में भारत-पाक सम्बन्धों का विस्तृत रूप में विश्लेषण एवं अनुसंधान करने का प्रयास किया गया है। 1999 के बाद भारतीय विमान आईसी-814 का अपहरण, आगरा षिखर वार्ता, 13 दिसम्बर 2001 को संसद पर आतंकवादी हमला तथा जम्मू-कश्मीर में आतंकवादी घटनाएँ करने के पीछे पाकिस्तानी मानसिकता का आधार क्या है? इन आतंककारी गतिविधियों एवं युद्ध में होने वाले अथाह धन का सदुपयोग देश व नागरिकों के विकास पर किया जाये तो पश्चिमी एशिया में दोनों देशों के अस्तित्व की तस्वीर ही कुछ और होगी। उपर्युक्त घटनाओं व तथ्यों के आधार पर शोध में भारत-पाक सम्बन्धों के समक्ष वर्तमान चुनौतियाँ, भविष्य में इनकी संभावनाओं एवं समस्याओं का समाधान किस सीमा तक होने की गुंजाइश है। आदि की संभावनाओं, चुनौतियों एवं अनुसंधान का प्रयास किया गया है।

वर्तमान सम्पूर्ण मानव समुदाय व विश्व के लिए अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद सर्वाधिक गंभीर समस्या हैं विश्व समुदाय में अमेरिका एक मातृ महाषक्ति का अस्तित्व रखता है। अमेरिका सामाजिक,

आर्थिक, राजनैतिक, विज्ञान व तकनीकी तथा सामरिक दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान रखता है। 11 सितम्बर 2001 में डब्ल्यू.टी.ओ. तथा अमेरिकी रक्षा विभाग पेंटागन पर हुआ आतंकवादी हमला इतना जबरदस्त था कि अमेरिका का आम नागरिक आज भी दहषतजदा है। भारत में पाक द्वारा प्रायोजित आतंकवाद पिछले 20 वर्षों से भी ज्यादा समय से चला आ रहा है। अतः कहने का अभिप्राय यह है कि इस अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद जैसी गंभीर समस्या पर विचार कर स्थायी शांतिपूर्ण समाधान न केवल आवष्यक है बल्कि अपरिहार्य हो गया है। पष्चिमी विकसित देश भी इस आतंकवाद की भयावहता को समझने लगे हैं। भारत करीब 22 वर्षों से आतंकवाद की त्रासदी का षिकार रहा है। देखा जाये तो भारत-पाक विभाजन के मूल में ही यह समस्या ब्रिटिष साम्राज्य की देन है। "फूट डालो और राज करो" की नीति पर अंगे्रजों ने ही साम्प्रदायिकता के बीज बोकर इस अंकुर को जन्म देकर ही भारत छोड़ा था। अस्सी के दषक में पाक द्वारा समर्थित आतंकवाद का भयावह रूप पंजाब में देखने को मिला। लेकिन पंजाब के तत्कालीन पुलिस प्रमुख रिबेटो एवं के.पी.एस. गिल ने अपनी अहम् भूमिका निभाते हुए सन् 1990 तक पंजाब से आतंकवाद का सफाया कर दिया।

उपरोक्त अध्ययनों के विष्लेषण और विवेचन से स्पष्ट है कि भारत-पाकिस्तान सम्बन्ध पर अनेक अध्ययन हो चुके हैं। परन्तु वर्तमान वैष्वीकरण के युग में इस विषय पर नये दृष्टिकोण से विचार आवष्यक है साथ ही सन् 1998 से भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों में काफी उतार चढ़ाव आये हैं कारगिल संघर्ष, आगरा षिखर वार्ता, संसद हमला, अन्य आतंकवादी हमलों के सन्दर्भ में वर्तमान में अध्ययन करना आवश्यक है। यही इस अध्ययन की प्रासंगिकता को स्पष्ट करता है।

भारत-पाक सम्बन्धों में कटुता और वैमनस्य कई बार पाकिस्तान के साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से उत्पन्न हो जाता है वे साम्प्रदायिक विष को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों एवं संगठनों में भी अभिव्यक्त करते रहते हैं। भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों में कटुता पैदा करने वाली एक प्रमुख समस्या पाकिस्तान की गुटीय और शस्त्रों की होड़ की नीति भी है। प्रस्तुत अध्ययन में इन विषयों पर सामयिक दृष्टिकोण से शोध प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में वैदेशिक सम्बन्धों में पूर्ण सामंजस्य एवं अविवाद की उम्मीद नहीं की जा सकती है लेकिन धीरे-धीरे दोनों देषों के सम्बन्धों में मधुरता एवं परिपक्वता आनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो चिन्ता व चिंतन की आवश्यकता है। वर्ष 1998 से सन् 2008 तक के काल में भारत-पाक सम्बन्धों को अध्ययन का केन्द्र बिन्दु बनाया गया है। उपरोक्त सन्दर्भ में अध्ययन की आवष्यकता स्वयंसिद्ध है।

भारत-पाक सम्बन्ध

भारत-पाक संघर्ष की प्रकृति को सही रूप से समझने के लिए भारत विभाजन में निहित तथ्यों का वस्तुनिष्ठ अध्ययन अपरिहार्य है। विभाजन की घटना ने दो समुदायों के बीच घृणा, अविष्वास और वैमनस्य को क्रूरतम ढग से उजागर किया है। विभाजन के बाद सभी समस्याओं के स्वतः ही सुलझ जाने का सपना देखने वालों ने जब वास्तविकता पर नजर दौड़ाई तो उन्हें घोर निराषा हुई। पाकिस्तान के जन्म से समस्याएँ सुलझने की अपेक्षा अधिक उलझ गई और इस महाद्वीप में नये संघर्ष का सूत्रपात हुआ जो अपनी प्रकृति से कहीं अधिक गहरा और पेचीदा था। कुलदीप नैय्यर का कहना ठीक है कि विभाजन के लिए आप किसी को भी दोषी ठहरायें, वास्तविकता यह है कि इस पागलपन ने दो समुदायों और दो देषों के बीच दो पीढियों से भी अधिक समय तक के लिए सम्बन्धों में कड़वाहट उत्पन्न कर दी। दोनों देषों में हर विषय और हर कदम पर मतभेद बढता गया और छोटी से छोटी बात ने बडे विवाद का रूप धारण कर लिया। माइकल बे्रषर ने ठीक ही लिखा है कि भारत और पाकिस्तान हमेषा अघोषित युद्ध की स्थिति में रहे है।

कश्मीर विवाद

कष्मीर की समस्या दोनों देशों के बीच एक ऐसे ज्वालामुखी की तरह है जो समय पर लावा उगलती रहती है। अलाप माईकल के शब्दों में, "कश्मीर समस्या अनिवार्यतः भूमि या पानी की समस्या नहीं, यह लोगों और प्रतिष्ठा की समस्या है।" कश्मीर की समस्या भारत और पाकिस्तान के बीच सबसे उलझी हुई समस्या है। भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद ब्रिटिश सरकार ने घोषणा कर दी थी कि देशी रियासतें अपनी इच्छानुसार भारत अथवा पाकिस्तान में विलय हो सकती हैं। अधिकांश रियासतें भारत अथवा पाकिस्तान में मिल गयी। और उनकी कोई समस्या उत्पन्न नहीं हुई। भारत के लिए हैदाराबाद और जूनागढ ने अवश्य समस्या उत्पन्न कर दी थी परन्तु वह शीघ्र ही हल कर ली गयी। कष्मीर की स्थिति कुछ विषेष प्रकार की थी। भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा पर स्थित यह राज्य भारत तथा पाकिस्तान दोनों को जोडता है। यहाँ की जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग मुस्लिम धर्मी था परन्तु यहाँ का आनुवंषिक शासक एक हिन्दु राजा था। अगस्त 1947 में कश्मीर के शासक ने अपने विलय के विषय में कोई तात्कालिक निर्णय नहीं लिया। पाकिस्तान इसे अपने साथ मिलाना चाहता था। 22 अक्टूबर, 1947 को उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त के कबायलियों ने एवं अनेक पाकिस्तानियों ने कष्मीर पर आक्रमण कर दिया। पाकिस्तान ने अपनी सीमा पर भी सेना का जमाव कर लिया। 4 दिनों के भीतर ही घुसपैठिये आक्रमणकारी श्रीनगर से 25 मील दूर बारामूला तक जा पहुँचे। 26 अक्टूबर को कश्मीर के शासक ने आक्रमणकारियों से अपने राज्य को बचाने के लिए भारत सरकार से सैनिक सहायता की मांग की और साथ ही कष्मीर को भारत में सम्मिलित करने की प्रार्थना भी की। भारत सरकार ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। 27 अक्टूबर को भारतीय सेनाएं कष्मीर भेज दी गयीं तथा युद्ध समाप्ति पर जनमंत सग्रह की शर्त के साथ कष्मीर को भारत का अभिन्न अंग मान लिया गया।

आर्थिक सम्बन्ध

भारत विभाजन ने आर्थिक समस्याएँ भी उत्पन्न कर दी। जिससे भारत व पाकिस्तान दोनों के अर्थतंत्र प्रभावित हुए। अविभक्त भारत का अर्थतंत्र विश्व में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता था, यहाँ कच्चे माल, खनिज तथा कृषि जन्य वस्तुओं की अधिकता थी। परन्तु विभाजन से इनके समक्ष अनेक समस्याएँ उत्पन्न होने लगीं। विभाजन से पूर्व भौगोलिक सीमाओं का कोई निर्धारण आर्थिक दृष्टि से नहीं किया गया वरन् साम्प्रदायिक आधार पर किया गया था जिसके सम्बन्ध में आर्थिक दृष्टि से कोई पूर्व योजना नहीं थी। इस कारण दोनों राष्ट्रों के समक्ष आर्थिक समस्या उठ खडी हुई। खाद्यान्न की दृष्टि से अविभक्त भारत आत्मनिर्भर था परन्तु विभाजन के उपरान्त मुख्यतः पंजाब विभाजन के उपरान्त गेंहुँ के उत्पादन का क्षेत्र पश्चिमी पंजाब, तथा इसके साथ-साथ सिन्ध व महाबलपुर जो कि सिंचित क्षेत्र थे पाकिस्तान में चले गये जिसके कारण भारत को 1948 में 0.28 करोड़ टन भोज्य पदार्थ तथा 1949 में 0.37 करोड़ टन भोज्य पदार्थ आयात करना पड़ा। चावल जो कि भारत के एक चैथाई भाग व पाकिस्तान के 45 प्रतिषत भाग में पैदा किया जाता है तथा पूर्वी पाकिस्तान मे चावल व पटसन की पैदा की जाती है फिर भी धान (चावल) की कमी विभाजन के उपरान्त पाकिस्तान में भोजन समस्या उत्पन्न कर रहा था। पूर्वी पाकिस्तान का भोज्य पदार्थ चावल होने के कारण यहाँ चावल की खपत होती है यह चावल विभाजन से पूर्व बिहार व उड़ीसा से आता था। विभाजन के उपरान्त पष्चिमी पाकिस्तान द्वारा 1 लाख 50 हजार टन जो कि निर्यात के लिए रखता था पूर्वी पाकिस्तान को भेजने पर भी पूर्वी पाकिस्तान जो कि अपने उत्पादन के अलावा 2 लाख से चार लाख टन की कमी रखता था समस्या बनी हुई थी। इसकी पूर्ति की अपेक्षा पाकिस्तान को

भारत से आयात कर पूरी करने की अपेक्षा रखता था।

विभाजन के बाद उठी समस्याओं में एक गम्भीर समस्या उद्योग-धन्धों एवं कच्चे माल को लेकर थी। ब्रिटिष काल में सुरक्षा व सुविधा की दृष्टि से धन्धे मध्य भारत में लगाये गये वहीं कच्चा माल सिंचित क्षेत्रों में उपजता था। कच्चे जूट के उत्पादन में भारत का एकाधिकार था। जूट का 73 प्रतिशत से 80 प्रतिषत भाग पूर्वी पाकिस्तान में उत्पन्न किया जाता था जो कि गुणवत्ता में भारत के जूट से श्रेष्ठ था। परन्तु इससे सम्बन्धित उद्योग पूर्वी पाकिस्तान में एक भी नही वरन भारत में है। जिससे जहाँ विभाजन के उपरान्त भारत को कच्चे माल (जूट) को लेकर समस्याएँ आयीं वहीं पाकिस्तान के सामने उद्योग लगाये जाने की समस्या तथा इसके निर्यात की समस्या थी। चटगांव कम क्षमता वाला व केवल एक बन्दरगाह होने के कारण या तो जूट भारत को निर्यात करे या भारत के बन्दरगाह का इस्तेमाल कर अन्य राष्ट्रों में भेजे।

जूट के समान कपास को लेकर भी समस्या थी। अविभक्त भारत में कपास उत्पादन में आधिक्य वर्तमान उत्तर-पष्चिमी पाकिस्तान का था। परन्तु सूती मिल इस क्षेत्र में नगण्य थी जिस कारण यह या तो भारत के अन्य क्षेत्रों में या विदेश में निर्यात कर दी जाती थी। इस समय भारत में सूती मिलें थी जिनमें 10 लाख चर्खे काम करते थे, उनमें से कपास बाहुल्य क्षेत्र अर्थात् पश्चिमी पाकिस्तान में 7 मिलें 7000 चर्खे व 2000 करघे चलते थे। विभाजन के उपरान्त भारत में कपास की कमी हुई वहीं पाकिस्तान में इससे सम्बन्धित मिल की समस्या उत्पन्न हो गयी।

इन समस्याओं को दूर करने व व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अगस्त 1947 को दोनों देशों ने स्टैंडस्टील समझौते पर हस्ताक्षर किये। लेकिन पाकिस्तानी सरकार द्वारा जूट पर निर्यात शुल्क लगाने की माँग की गयी जिसे भारत ने अस्वीकार कर दिया परन्तु फिर भी पाकिस्तान द्वारा भारत में जाने वाली एवं भारत से आने वाली सभी वस्तुओं पर प्रषुल्क लगा कर प्रतिबन्धित कर दिया, जिसके प्रतिरोध में भारत द्वारा भी ऐसा ही किया गया। जिसके परिणामस्वरूप दोनों राष्ट्रों के बीच आर्थिक युद्ध शुरू हो गया। जहाँ एक तरफ बचे माल व उद्योगों की समस्या दोनों राष्ट्रों के बीच बनी हुई थी वहीं मजदूरों की समस्या भी थी। चमड़े का काम करने वाले अधिकांश मुसलमान मजूदर भारत से पाकिस्तान देषान्तर गमन कर लेने के कारण भारत में चमडा उद्योग प्रभावित हुआ।

पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को प्रोत्साहन

दुर्भाग्यवश पाकिस्तान द्वारा पंजाब और जम्मू-कश्मीर में भारत के विरूद्ध आतंकवाद को लगातार सहायता पहुँचाने और उसे बढावा दिये जाने के कारण दोनों देशों के बीच सम्बन्धों में काफी कटुता उत्पन्न हुई। भारत के विरूद्ध आतंकवाद को पाकिस्तान के समर्थन तथा भारत के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप करने में उसकी प्रवत्ति मार्च 1993 में मुम्बई में हुए बम विस्फोटों से प्रकट हुई। मुम्बई में हुए बम विस्फोटों की योजना बनाने तथा उसे कार्यरूप देने में पाकिस्तान की सहअपराधिता से भारतीय जनता का मत पक्का हुआ है कि पाकिस्तान भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप के मंसूबे बनाता है और भारत में अस्थिरता पैदा करने के लिए स्थितियों का निर्माण करता है। साथ ही पाकिस्तान के नेताओं ने बडे भड़काने वाले वक्तव्य भी दिये जिनमें जम्मू व कष्मीर की स्थिति को जानबूझकर गलत तरीके से पेश करने का प्रयास किया गया। पाकिस्तान ने हजरत बल की घटना के सम्बन्ध में लगातार मिथ्या प्रचार किया जिसका उददेष्य साम्प्रदायिक भावना को भड़काना तथा उग्रवादी तत्वों को बढ़ावा देना था।

पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम का एक पहलू उल्लेखनीय है। भुट्टो ने अपने जीवन काल में ही पाकिस्तान की एटम बम की तलाष को इस्लामी भाईचारे से जोड़ दिया था और पाकिस्तानी बम को इस्लामी बम की संज्ञा दी गई। पाकिस्तान का पष्चिम एषियोन्मुख होना इस कारण सहज हुआ। भारत के साथ युद्ध वर्जन सन्धि का प्रस्ताव इसी प्रकरण से जुड़ा हुआ है। जनरल जिया का ऐसा सोचना था कि यदि भारत को इस विषय में आष्वस्त किया जा सके कि भारत के प्रति पाकिस्तान का रूख आक्रामक नहीं है तो भारतीय नेता राजनयिक उसके परमाणु कार्यक्रम को शान्तिपूर्ण मान लेंगे और इसके अन्तर्राष्ट्रीय नियन्तृण-निरीक्षण के लिए कोषिष छोड़ देंगे। इसके अतिरिक्त युद्धवर्जन सन्धि के प्रस्ताव का एक प्रचार वाला पक्ष भी है जब भारत ने बाद में इसे अस्वीकार कर किया तो पाकिस्तान के लिए यह कहना सम्भव हुआ कि भारत उसके साथ सुलह या सम्बन्धों में सामान्यीकरण के लिए तैयार नहीं। वास्तव में इस दलील में कोई दम नहीं है। भारतीय पक्ष यह बात बहुत तर्कसंगत ढंग से दोहराता रहा है कि भारत और पाकिस्तान के बीच किसी विषेष युद्धवर्जन सन्धि की कोई आवष्यकता नहीं। षिमला समझौते पर हस्ताक्षर करने के साथ दोनों पक्ष पहले ही विवादों को निपटारे के लिए युद्ध का बहिष्कार कर चुके हैं। परन्तु यह बात भी याद दिलायी जाती रही है कि जब कभी अतीत में नेहरू जी ने युद्धवर्जन सन्धि का प्रस्ताव किया था, तब पाकिस्तान ने इसे गैर-जरूरी समझा था। जहाँ तक परमाणु कार्यक्रम का सम्बन्ध है, उसके सन्दर्भ में युद्धवर्जन सन्धि निरर्थक है। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्रचार के रणक्षेत्र मे निष्चय ही इस प्रस्ताव का पाकिस्तानी राजनयिकों ने भरपूर लाभ उठाया। तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री राजीव गाँधी की अनुभवहीनता और कुछ भारतीय पत्रकारों की पेषेवर पाकिस्तानी प्रतिबद्धता ने इस काम को आसान बनाया।

भारत विश्व में एक विस्तृत और विशाल जनसंख्या वाला देश है इसकी विदेश नीति का विष्व की राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। स्वतंत्रता से पूर्व भारत की कोई स्पष्ट विदेष नीति नहीं थी क्योंकि भारत ब्रिटिश सत्ता के अधीन था, परन्तु विश्व मामलों में भारत की सुदीर्घ परम्परा रही है। इसका सांस्कृतिक अतीत अत्यन्त गौरवमय रहा है। न केवल पड़ोसी देशों के साथ, अपितु दूर-दूर स्थित देशों के साथ भी भारत की सांस्कृतिक छाप स्पष्ट दिखायी पड़ती है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद भारतीय विदेश नीति मूलभूत बदलाव से गुजरी है और अब यह कहीं अधिक यर्थाथवादी और मुख्यतः राष्ट्रीय हितों को साधने वाली हो गयी है। नीतिकारों ने काफी दक्षता से कदम बढ़ाते हुए अमेरिका से रिश्ते बेहतर किये, चीन के साथ पूर्वी एषिया के देषों की ओर रूख किया और इजरायल के साथ रिष्तों में बदलाव आया। विभिन्न विचार धाराओं की सरकारों द्वारा उठाये गये कदमों ने देष को उभरती हुई वैष्विक व्यवस्था में अप्रासंगिक होने से बचाया।

भारत की परमाणु नीति

परमाणु निःशस्त्रीकरण की दिशा में सन् 1968 की 'अणु अप्रसार सन्धि' एक महत्वपूण् दस्तावेज मानी जाती है, लेकिन भारत ने इस अप्रचुरण सन्धि पर हसतक्षर करने से इन्कार कर दिया। क्योंकि इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने का यह अर्थ होता है कि भारत अपने विकसित परमाणु अनुसन्धान के आधार पर परमाणु शक्ति का शान्तिपूर्ण उपयोग नहीं कर सकता था। इस तर्क का महत्व 18 मई, 1974 को और भी खुलकर हमारे सामने आया, जबकि भारत ने शान्तिपूर्ण उद्देष्यों के लिए एक भूमिगत परमाणु परीक्षण किया। यह परमाणु विस्फोट इसलिए किया था कि भारत को यह जानकारी हो सके कि परमाणु शक्ति के क्या-क्या शान्तिपूर्ण उपयोग हो सकते हैं और परमाणु शक्ति की सहायता से भारत अपने विकास कार्यों को किस प्रकार आगे बढ़ा

सकता है?

भारतीय विस्फोट का सबसे बडा महत्व यह है कि इससे परमाणु शक्ति पर वर्षों से चले आ रहे महाषक्तियों के एकाधिकार को आघात पहुँचा। इसके अतिरिक्त, इस विस्फोट का यह महत्व भी है कि भारत के परमाणु समुदाय में दाखिल होने से परमाणु देषों की एक नयी श्रेणी का जन्म हुआ। अब तक जो परमाणु देष रहे उन सभी देशों ने विध्वंसक हथियारों का निर्माण करने में अपनी शक्ति का उपयोग किया, परन्तु भारत किसी भी स्थिति में शस्त्र निर्माण के लिए परमाणु शक्ति का उपयोग करने के पक्ष में नहीं है। यह सच है कि ये महाषक्तियां भी समय पर परमाणु ऊर्जा के शान्तिपूर्ण उपयोग की आवष्यकता पर जोर देती रही हैं। उनकी प्रवृत्ति रही है कि परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में किए जाने वाले अनुसन्धान की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर उनका एकाधिकार बना रहे ताकि यदि विकासषील देष शान्तिपूर्ण उद्देष्यों के लिए परमाणु शक्ति का उपयोग करना चाहें तो भी उन्हें महाषक्तियों पर आश्रित रहना पडे।

नाभिकीय आयुधों के प्रसार को रोकने और पूर्ण निरस्त्रीकरण के प्रति भारत का दृष्टिकोण प्रारम्भ से ही साफ रहा है ओर इसे संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्दर और बाहर समय पर स्पष्ट किया जा चुका है। भारत की दृष्टि में परमाणु अप्रसार सन्धि जिसे 5 मार्च, 1970 से लागू किया गया है भेदभावपूर्ण है, असमानता पर अधारित है तथा एकपक्षीय और अपूर्ण है। भारत का मानना है कि नाभिकीय आयुधों के प्रसार को रोकने और पूर्ण निरस्त्रीकरण के उद्देष्य की पूर्ति के लिए क्षेत्रीय नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किए जाने चाहिए। परमाणु अप्रसार सन्धि का मौजूदा ढाचा भेदभावपूर्ण है और नाभिकीय शक्तियों के हितों का पोषण करता है, लेकिन दूसरी ओर नाभिकीय खतरे के साथ जी रहे भारत जैसे अनाभिकीय आयुध वाले देषों के वाजिब हितों की अनदेखी करता है। भारत के अनुसार वे कारण आज भी बने हुए हैं जिनकी वजह से भारत ने अब तक इस सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं किए। बल्कि अब मध्य एषियाई गणतन्त्रों में व्याप्त राजनीतिक अनिष्चितता और स्वयं अमेरिका द्वारा पाकिस्तान के पास नाभिकीय आयुध होने की पुष्टि किए जाने से परमाणु अप्रसार सन्धि के सवाल पर भारत के पास और भी चैकसी के अलावा और कोई चारा नहीं रह गया है।

भारतीय विदेश नीति

भारतीय सभ्यता का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। एक राष्ट्रीय शक्ति के रूप में भारत की पहचान भी कम पुरानी नहीं है। पुराणों और मिथकों में भारत को हिमालय से लेकर समुद्र-पर्यन्त उस क्षेत्र को परिभाषित करने का प्रयत्न किया गया ह, जो एक चक्रवर्ती सम्राट के शासन के योग्य भू-भाग समझा जाता था। कौटिल्य ने अपनी पुस्तक 'अर्थषास्त्र' में यर्थाथवादी निर्देषों से यह बात पुष्ट की कि इस तरह का चिन्तन कोरी कल्पना नहीं था। इस ग्रन्थ में यह सलाह दी गयी है। कि विजिगीषु (विजय का अभिलाषी) राजा को पड़ोसी राज्यों के साथ किस प्रकार के सम्बन्ध रखने चाहिए। मण्डल सिद्धान्त का प्रतिपादन अर्थात् शत्रु के शत्रु के साथ मित्रता की हिदायत इसी ग्रन्थ में दी गई है।

इसके अतिरिक्त महाभारत के शांति पर्व तथा अन्य सूत्रों-स्मृतियों में अनेक सारगर्भित टिप्पणियाँ मिलती हैं, जिनसे पता चलता है कि प्राचीन काल में भारतीय विद्वानों व प्रषासकों ने विदेष नीति और राजनय को कितना महत्वपूर्ण समझा था। प्रसिद्ध भारतीय राजनयिक एवं इतिहासकार सरदार के. एमपणिक्कर ने इसी सन्दर्भ में महाभारत के 'दूत वाक्यम्' प्रसंग का उल्लेख किया है। यह समझना भ्रांतिपूर्ण है कि यह सब विष्लेषण सैद्धान्तिक स्तर पर ही चलता था। व्यवहार और अनुभव के क्षेत्र में भी भारत नौसिखिया नहीं रहा। कौटिल्य के षिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में सेल्यूकस निकेटोर नामक क्षत्रप द्वारा भेजा गया राजदूत मेगस्थनीज था। चन्द्रगुप्त के पुत्र बिन्दुसार ने राजदूतों को आदान-प्रदान किया। सम्राट अषोक द्वारा सिंहली द्वीप (श्रीलंका) तथा दक्षिण पूर्व एषिया में भेजे गये विषेष दूतों का उपयोग धर्म विजय के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ था। बाद के वर्षों में कुषाणों, गुप्तों तथा हर्षवर्द्धन के काल में धार्मिक व सांस्कृतिक षिष्टमण्डलों की आवाजाही चलती रही। इस सब ऐतिहासिक पुनरीक्षण का अभीष्ट यह प्रमाणित करता है कि विदेष नीति नियोजन और राजनयिक सम्पर्कों की भारतीय परम्परा उतनी ही पुरानी है, जितनी चीन या यूरोप के प्राचीनतम देषों की। इसमें यूरोपीय औपनिवेषिक शक्ति के आने के बाद ही व्यवधान पडा। परन्तु भारत की तुलना उन राष्ट्रों के साथ कतई नहीं की जा सकती, जिनका बाहरी दुनिया से परिचय साम्राज्यवाद के युग में परदेषियों के माध्यम से पराधीन उपनिवेषों के रूप में हुआ।

स्वतंत्र भारत न तो हीनता की दृष्टि से ग्रस्त था और न ही किसी प्रकार के अपराध बोध से। हजारों वर्षों से भारत के वैदेषिक सम्बन्ध शान्तिपूर्ण, समता वाले एवं सहकार की भावना से ओत-प्रोत रहे हैं। यह मात्र संयोग या अवसरवादिता नहीं कि नेहरू जी ने स्वतंत्र भारत की विदेष नीति की आधार षिला अषोक ओर बुद्ध के शाष्वत सिद्धान्तों एवं दर्षन पर रखी। इस सिलसिले में यह बात याद रखने लायक है कि जब भारत ने बाहरी विष्व से अपना नाता तोड़ा एवं अपने खिड़की-दरवाजे बन्द किये, तभी भारतीय कूप मंडूक बन गये और भारतीय राजनयिक क्षमता का ह्रास आरम्भ हो गया। अरब यात्री अलबरूनी ने अपने यात्रा वृतान्त में यह बात बहुत अच्छी तरह से उद्घाटित की है।

ऐसा नहीं है कि भारतीय विदेश नीति की ऐतिहासिक परम्परा सिर्फ हजारों वर्ष पहले ही ढ़ी जा सकती है। मुगलों के बाद केन्द्रीय सत्ता के इधर-उधर छितर जाने पर भी विदेशों के साथ प्रमुख भारतीय राजनयिक हस्तियों के सम्बन्धों का सिलसिला चलता रहा। मराठों और टीपू सुल्तान ने अंग्रेजो से लोहा लेते वक्त फ्रांसीसियों से सहायता व समर्थन पाने का प्रयत्न किया तो राजा राम मोहन राय जैसा व्यक्ति मुगल सम्राट की पैरवी करने के लिए विलायत तक पहँुचा। 1858 के बाद ही यह स्थिति पैदा हुई, जब भारतीयों को इस सम्प्रभु अधिकार से वंचित किया गया और ब्रिटेन में लन्दन स्थित इण्डिया ऑफिस ने भारतीय रियासतों और ब्रिटिष शासनाधीन भारत के वैदेषिक सम्बन्धों का बीड़ा उठाया। तब भी भारत की स्थिति अन्य उपनिवेषों से भिन्न थी। भारत के आकार और सामाजिक महत्व को देखते हुए यह सम्भव नहीं था कि उसके बारे में विदेष नीति सम्बन्धी सारे निर्णय लन्दन में लिये जायें। ब्रिटिष सम्राट के भारत में नियुक्त प्रतिनिधि वायसराय का अधिकार क्षेत्र काफी विस्तृत था। अनेक विद्वानों ने यह मत प्रकट किया है कि भारतीय हितों को लेकर इण्डिया आॅफिस, ब्रिटिष विदेश विभाग और वायसराय के बीच एक त्रिकोणीय रस्साकषी चलती रहती थी। अफगानिस्तान और तिब्बत के सन्दर्भ में रूसी साम्राज्यवादी महत्वकांक्षाओं को देखते हुए भारतीय अंग्रेज अधिकारियों को काफी स्वायत्ता स्वयंमेव मिल जाती थी।

भारतीय राष्ट्रीय कांगे्रस और विदेश नीति

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना अंग्रेजी षिक्षा प्राप्त मध्यमवर्गीय भद्र लोगों द्वारा की गयी थी। यह स्वाभाविक था कि ऐसे लोगों की रूचि और जानकारी वैदेषिक मामलों में सामान्य से ज्यादा थी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दूसरे अधिवेषन (1982) में ही इस बात का विरोध किया गया था कि भारतीय सैनिकों का प्रयोग उपनिवेषवादी प्रषासन अपनी साम्राज्यवादी महत्वकांक्षाओं की पूर्ति के लिए बर्मा और अफगानिस्तान में कर रहे थे। परन्तु कुल मिलाकर अपने प्रारम्भिक वर्षों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस व्यापक जनाधार वाली कोई क्रान्तिकारी संस्था

नहीं थी। इसका तथा इसके नेताओं का रूख-रवैया सुधारवादी और समझौतावादी थी। अतः आने वाले वर्षों में भले ही इसने विदेष नीति विषयक कई प्रस्ताव पारित किये, परन्तु उनका महत्व सीमित ही रहा। लेकिन इसकी यह एक महत्वपूर्ण दूरदर्षिता थी कि इस संस्था ने आरम्भ से ही भारतीय स्वतंतृता संग्राम को एषियाई-अफ्रीकी भाईचारे ओर साम्राज्य के साथ जोड ंकर देखना शुरू किया।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में रूचि अधिक स्पष्ट रूप से दर्षाना और ब्रिटिष विदेष नीति के प्रति असहमति का स्वर मुखर करना वास्तव में भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी के आविर्भाव के साथ ही आरम्भ हुआ। खिलाफत आन्दोलन के दौरान विदेष नीति के मसलों (धर्म के आधार पर ही सही) के साथ भारत की आम जनता को जोड़ा गया। इस बार फिर अरब-एषियाई एकता यथा उपनिवेषवाद विरोधी स्वर पुष्ट हुआ। महात्मा गाँधी का दक्षिण अफ्रीका में अनुभव उन्हें नस्लवादी बर्बरता का असली चेहरा दिखा चुका था। उनके लेखन, भाषणों आदि में रंगभेद व नस्लवाद विरोध भी विदेष नीति में रूचि लेने वालों के लिए महत्वपूर्ण बन गये।

प्रथम विष्व युद्ध के दौरान बडे पैमाने पर भारतीय सैनिकों को यूरोपीय तथा अन्य अफ्रो-एषियाई मोर्चों पर लड़ने का मौका मिला। इस अनुभव ने उनके सामने यह कटुसत्य उद्घाटित किया कि औपनिवेषिक शासकों के लिए 'भारतीय जान' की कीमत बलि के बकरों जितनी ही है। इसके अलावा उन्हें यह समझने का मौका मिला कि उन्हें गुलाम बनाने वाले गोरे राष्ट्र खुद अपनी आजादी की कितनी बड़ी कीमत चुकाने को तैयार हैं। राजनीतिक चेतना से सम्पन्न बुद्धिजीवियों के लिए इस निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन नहीं था कि साम्राज्यवाद प्रभुत्व उपनिवेषवाद की किसी विषेषता पर नहीं, बल्कि भाडे के देषी टट्टुओं पर ही टिका है। इसी तरह सोवियत क्रान्ति की सफलता ने यह बात भली भांति झलका दी कि शासन भले ही कितना उत्पीडक और सैनिक शक्ति सम्पन्न क्यों न दीखता हो, परन्तु दिलेर-दुर्बल दिखने वाला प्रतिद्वन्दी उसका तख्तापलट सकता है। इसके अतिरिक्त लेनिन ओर त्रोतस्की जैसे बोल्षेविक नेताओं की मूल प्रेरणा माक्र्सवादी विचारधारा थी, जिसमें संसार भर के सर्वहाराओं को एक होने के लिए आह्वान किया गया था। कम से कम सफलता प्राप्ति के तत्काल बाद के वर्षों में बोल्षेविकों की वैचारिक शुद्धि बनी रही और उन्होंने साम्राज्यवादी-उपनिवेषवादी शोषण से औरों को भी मुक्त करने का बीडा उठाया। मानवेन्द्र नाथ राय और वीरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय सरीखे भारतीयों ने सैद्धान्तिक और व्यवहारिक रूप से समाजवाद के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के प्रकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। साम्राज्यवाद और समाजवाद के बीच जन्मजात बैर हैं लेनिन की प्रसिद्ध उक्ति है- "पूँजीवाद का चरमोत्कर्ष साम्राज्यवाद है" अतः साम्राज्यवाद के विरूद्ध संघर्षरत स्वतंत्रता सेनानियों को हर सम्भव सहायता देना सोवियत संघ की भावनात्मक ही नहीं बल्कि सामरिक जरूरत भी थी।'

इन्दिराकालीन विदेश नीति

जनवरी, 1966 में शास्त्री जी के निधन के बाद श्रीमती इन्दिरा गाँधी प्रधानमंत्री बनीं। पत्रकारों और जीवनीकारों की कृपा से श्रीमती गाँधी की छवि लौह महिला वाली सिद्ध हुई। लोगों के मन में आज भी या तो 1971 के बंग्लादेष मुक्ति अभियान की याद ताजा है या मई, 1974 में पोखरन में परमाणु विस्फोट और जून, 1975 में आपातकाल की घोषणा की। यदि चुन-चुन कर ऐसे उदाहरण पेष किये जायेंतो श्रीमती गाँधी को अति यथार्थवादी प्रमाणित करना कठिन नहीं होगा। श्रीमती गाँधी की विदेष नीति का अध्ययन करते वक्त इस बात को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए कि उन्होंने कठिनतम आन्तरिक चुनौतियों से जूझते हुए भारत को अन्तर्राष्ट्रीय राजनय का केन्द्र बिन्दु बनाये रखने में सफलता प्राप्त की। 1966 से 1969-70 तक कांग्रेस पार्टी में उनकी अपनी स्थिति निरापद नहीं थी प्रिवीपर्स की समाप्ति, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कांगे्रस का विभाजन, बिहार में अकाल का समना आदि चुनौतियाँ उन्हें अपने कार्यकाल के पहले चरण में पूरी तरह व्यस्त रखे रही। बंग्लादेष प्रकरण में पराक्रमी प्रदर्षन और 1971 के चुनाव में अभूतपूर्व सफलता के थोडे ही समय में उन्हें वैदेषिक मामलों में एकाग्रचित होने का अवसर मिला। 1972 में षिमला समझौता सम्पन्न हुआ तो 1973-75 में जयप्रकाष नारायण के नेतृत्व में उनके राजनीतिक अस्तित्व को चुनौती देने वाला व्यापक जन-आन्दोलन शुरू हुआ। इसकी परिणति जून, 1975 में आपातकाल की घोषणा और अन्ततः मार्च 1977 के संसदीय आम चुनाव में श्रीमती गाँधी की हार में हुई।

निष्कर्ष

भारत और पड़ौसी देशों के सम्बन्धों पर ये बातें अवश्य लागू होती है, परन्तु इसके साथ कुछ ऐसे अनूठे तत्व भी हैं, जिनको रेखांकित किया जाना जरूरी है। इस बात के ब्यौरे में जाने से पहले यह स्पष्ट करना उपयोगी होगा कि भारत के निकटस्थ किन देशों को हम भारत के पड़ौसी देश मानते हैं। देश के विभाजन से जन्मा पाकिस्तान और उसके विघटन से पैदा हुआ बंग्लादेश निश्चय ही इस श्रेणी में आते हैं। नेपाल, भूटान तथा श्रीलंका को पड़ौसी देश मानने में किसी को कोई हिचकिचाहट नहीं हो सकती। भौगोलिक दृष्टि से चीन, अफगानिस्तान, बर्मा, इण्डोनेशिया, मालदीव और मारीशस इसी श्रेणी में रखे जाने चाहिए। इस प्रकरण में भारत के विभिन्न पड़ौसी देशों के साथ उभय-पक्षीय सम्बन्धों का विवेचन तिथिक्रम के साथ करने के अतिरिक्त तुलनात्मक विश्लेषण का प्रयत्न भी किया गया है। पाकिस्तान और चीन के साथ भारत के सम्बन्ध विशिष्ट और जटिल है तथा एक बहुत बड़ी सीमा तक महाशक्तियों के साथ हमारे सम्बन्धों से अनुशासित होते हैं। अतः इनको अपेक्षाकृत अधिक विस्तार के साथ परखा गया है। मालदीव के साथ सम्पर्क इतने बिखरे हुए और छिटपुट रहे हैं कि उनकी सिर्फ स्मृति भर तैयार करने की कोई उपयोगिता नहीं। इस स्थिति में भू-राजनीतिक परिप्रेक्ष्य या क्षेत्रीय सहकार की प्रस्तावना के सन्दर्भ में इनका उल्लेख हो सकता है। अतः यहाँ पाकिस्तान, बांग्लादेश, चीन, नेपाल, भूटान और श्रीलंका के साथ भारत के सम्बन्धों का विश्लेषण किया जा सकता है। भारत-पाकिस्तान सम्बंधों पर समय पर अध्ययन होते रहे हैं वर्तमान अध्ययन के भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों का विश्लेषण किया गया है साथ ही दोनों देशों के बीच प्रमुख समस्याओं को जानने का प्रयास किया गया है। जिन पर पूर्व के शोधों में कम ध्यान दिया गया है। समस्त अकादमिक कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य दोनों देशों के समस्त प्रकार के पारस्परिक सम्बंधों की पडताल करना रहा है। तथा इस दिशा में ऐसे सुझाव दिये गये जिनसे दोनों पड़ौसी देशों के बीच विद्यमान समस्याओं का स्थायी समाधान हो सके। भारत की विदेश नीति प्रारम्भ से ही आलोचना का शिकार रही है। इसके प्रश सकों ने जहां इसे सैनिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर होते हुए भी अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का गौरव और प्रतिष्ठा बढाने वाली और राष्ट्रीय हितों को पूर्ण करने वाली बताया है वहीं इसके आलोचकों ने इसे निरा शान्ति का ढोग करने वाली बताकर उसे राष्ट्रीय हितों के प्रतिकूल चित्रित किया है।

References

1. शर्मा डा0 नीरजा, महिला सशक्तिकरण, 2013, पृ0सं0-99

2. केनिथ, प्लेचर, 'द हिस्टन्न् आफ इण्डिया' न्यूयार्क, द रोजन पब्लिसिंग ग्रुप, 2010।

3. गुप्त, प्रानो, 'मदर इण्डिया ए पॉलिटिकल बायोग्राफी ऑफ इन्दिरा गांधी' नई दिल्ली, पेनजीयन बुक्स, 2012।

4. देसाई, मेघनाथ, 'द रिडस्कवरी आफ इण्डिया,' नई दिल्ली, पेनजीयन बुक्स 2011।

5. हंसारिया, जस्टिस बी.एल., '6 शिड्यूल टू द कंस्टीटूशन' दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कम्पनी, 2005।

6. वश्वरंजन मोहन्ते, 'कंस्टीटूशन गवरमेंन्टस एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया' नई दिल्ली, न्यू सेन्टरल पब्लिसर, 2009।

7. सोनम ससंहए ;2018द्ध भारत-नाक स्ब्धः 1947 से अब तक का सफरए ब्ाप्त्श्र टवसनउम 9 प्नम 3

8. डॉ.शीला ओझा, (2014), भारत-पाकम्बिन्धः स्वरूप और बदलाव, पीअर रीव्यूड ररसर्च जर्लए Vol 3, Issue 1

9. DR. SURVIND KUMAR, (2014), कश्मीर समस्या और समाधान, IJRAR January 2014, Volume 1, Issue 1

10. Kashmir in Conflict: India, Pakistan and the Unending War By Victoria Schofield Published 2003, by I.B.Tauris ISBN 1-86064-898-3 pp112